ISSN 2349-638x
Impact Factor 5.707

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL

PEER REVIEW & INDEXED JOURNAL

Email id : aiirjpramod@gmail.com

www.aiirjournal.com

SPECIAL ISSUE No. 45

Executive Editor
Dr. S.M. Maner
Principal
Tuljabhavani Mahavidyalaya,
Tuljapur, Dist. Osmanabad (M. S.)

Co-Editor
Prof. V. H. Chavan
Dept. of Hindi
Tuljabhavani Mahavidyalaya,
Tuljapur, Dist. Osmanabad (M. S.)

Chief Editor
Prof. Pramod Tandale

Scanned by CamScanner

62.	डॉ. रामकृष्ण बदने	प्रभा खेतान के आत्मकथा में व्यक्त नारी संवेदना	156
63.	संतोष अशोक निगुडे	मार्कण्डेय के कहानियों में 'स्त्री विमर्श'	158
64.	प्रा. मुजावर जैनु हमिद	पेहन पर रघू' उपन्यास और वैश्विकरण	160
65.	डॉ. राजकुमार पंडितराव जाधव	हिन्दी साहित्य : दलित विमर्श एवं चेतना	162
66.	प्रा. विश्वनाथ चंद्रकांतपटेकर	इक्कीसवीं सदी की हिंदी आत्मकथाओं मेंदलित विमर्श	164
67.	डॉ. माधुरी सोनटक्के	उषा प्रियंवदा का उपन्यास 'भया कबीर उदास' में स्त्री विमर्श	166
68.	डॉ. आरिफ शौकत महात	भूमंडलीकरण और बदलते मानवीय मूल्य	169
69.	डॉ. काकासाहेब गंगणे डॉ. मंत्री रामधन आडे	21 वीं सदी का हिन्दी गदय साहित्य और स्त्री विमर्श	171
70.	डॉ.एस जे पवार	'अपना मन उपवन' उपन्यास में व्यक्त पर्यावरण विमर्श	174
71.	डॉ.साहेबहुसैन जे. जहागीरदार	अल्पसंख्यक विमर्श को व्यक्त करता इक्कीसवीं सदी का उपन्यास 'अपवित्र आख्यान'	177
72.	प्रा. विवेकानंद हरिभाऊ चव्हाण	कब्र का मुनफा – 21 वीं शताब्दी का बाजारवाद	181

ISSN 2349-638X
www.aiirjournal.com

Scanned by CamScanner

भूमंडलीकरण और बदलते मानवीय मूल्य

डॉ. आरिफ शौकत महात
सहायक प्राध्यापक,
विवेकानंद महाविद्यालय,(स्वायत्त) कोल्हापुर।

२० वीं शताब्दी के अंतिम दौर में भूमंडलीकरण ने अपने पैर पसारने शुरू किए। लेकिन आज ये अपने उच्चतम स्तर पर विराजमान है। भूमंडलीकरण का संबंध अर्थतंत्र से जुड़ा हुआ है। समूचा विश्व आर्थिक मापदंड को केंद्र में रखकर अग्रेसित हुआ। बाजारवाद का एक भूचाल चला जिसकी चपेट में समूचा विश्व आ गया। जब कोई नई व्यवस्था जन्म लेती है तो अपने साथ बदलाव लाती है। पूरी व्यवस्था को उससे तालमेल बिठाने में अर्सा बीत जाता है। कहीं-कहीं नए पुराने के बीच टकराहट होती है। इससे उत्पन्न मोह, आकांक्षा, संघर्ष आदि तत्कालीन समय पर छाए रहते हैं। भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में बात की जाए तो, अर्थतंत्र का फैलता यह मायाजाल समाज, साहित्य एवं संस्कृति को भी अपने घेरे में लेने से नहीं चुका।

भूमंडलीकरण से विश्वभर में आर्थिक क्रांति संभव हुई। समुचा विश्व एक ग्राम में तब्दील हुआ। 'वसुधैव कुटुंबकम' की संकल्पना को मूर्त रूप देने का काम भूमंडलीकरण से संभव हो पाया, इसमें दोराय नहीं। इसका सीधा संबंध अर्थतंत्र से होने के कारण समाज पर इसका प्रभाव बड़े पैमाने पर नजर आता है। साथ ही सामाजिक संरचना में इससे बदलाव आया। भूमंडलीकरण का सरोकार है हमारे बाजार से । हमारा वह बाजार जो गरिबों ने अपने पुश्तैनी धंधों और श्रम से तैयार किया। अंग्रेजी शिक्षा से उपजे समाज ने इन धंधों को छोड़ नौकरी अपनाई इसी से मध्यवर्ग पैदा हुआ। यही कुलीन नौकरशाह मध्यवर्ग है जो आज भूमंडलीकरण का स्वागत कर रहा है।

भूमंडलीकरण के कारण सबसे ज्यादा हमारे सामाजिक एवं पारिवारिक मूल्य ध्वंस हुए विश्व को समेटने के चक्कर में हम अपनों से कट गए। हमारे अंदर पनपते दया, क्षमा, करूणा जैसे मूल्य तिरोहित हो गए। इसके कारण उपजी स्पर्धा ने हमारे मानवाधिकार को बूरी तरह से रौंदा। अर्थतंत्र के इस भूलभूलैये में सबसे ज्यादा परिवार फसा। पारिवारिक हानी सबसे ज्यादा हुई। पारिवारिक विघटन रफ्तार से बढ़ने लगा। 'हम सब' से 'मैं' तक का सफर हमने बड़ी जल्दी नाप लिया। यही वजह है कि अकेलापन, अनिश्चिती, बेबसी जैसे रोग के हम शिकार हो गए। प्रभा खेतान अपने उपन्यास "आओ पेपे घर चले" में इस पर मार्मिक प्रहार किया है। आर्थिक उन्नति हेतु अमेरिका में रहनेवाले भारतियों का चित्रण यहाँ किया गया है। अमेरिका में रहते धन-संपत्ति तो मिली लेकिन अपनापन, संतृष्टि जैसे चीजें नदारद हो गई। इसी के चलते अकेलापन, बेबसी घर तक पहुँच रही है। बाजारवाद नामक देवता का आगमन हमारे जीवन में हुआ है। और हम सब आँख मूँद उसी के पीछे चल रहे हैं। ममता कालिया का "दौड" उपन्यास भूमंडलीकरण के चपेट में आए रिश्तों की कसमसाहट एवं पारिवारिक त्रासदी को चित्रित करता है। बच्चे अपनी करिअर को उँची उड़ान देने हेतु घर से बाहर अपना मुकाम बनाते हैं। पति पत्नी एक दूसरे से दूर रहते हैं। अनका अपना घर गेस्ट हाऊस बन चुका है। जहाँ वो सिर्फ छुट्टियों में आते हैं और उस घर के केअर टेकर माता-पिता बन चुके हैं। अमेरिका में रह रहे बेटे के पास अपने पिता को मुखाग्नी देने के लिए समय नहिं इसलिए वो कहता है कि किराये के बेटे से मुखाग्नी दी जाए बाकी का कार्य हम छुट्टी में आने पर करते हैं।

अर्थतंत्र ने हमारे दिलो दिमाग पर कुछ इस तरह भ्रमजाल फैला रखा है कि हम सही गलत के मायनों को ही खो बैठे हैं। "दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता" में सुरेन्द्र वर्मा जी इसी बात को उजागर करते हैं। काम की तलाश में आए दो युवक भोला और नील गलत रास्तों चुनकर भी उसे गलत नहीं मानते। भोला अंडरवर्ड ज्वाइन करता है और नील अपने आप को पुरुष वेश्या के ढाल देता हैं। वह कहता है - "हम जिस पूँजीवाद समाज में जी रहे हैं, उसमें हमारे सामने पेट भरने का एक ही रास्ता है- अपनी किसी काब्लियत को बाजार में बेच पाना।" [२] नील अपने आप को बेचने के लिए विज्ञापन तक देता है "कुशाग्र बुद्धि, सम्भाषण-कुशल सजीले युवक को युवती मित्र चाहिए। ज़िन्दगी को बर्दाश्त के लायक बनाना हो, तो आज ही संपर्क करें"। [३] फिर ज़िन्दगी को बर्दाश्त के लायक बनाने के लिए नील के संपर्क में कुमुद, कुन्तल राव, शहनाज हैदर, शिल्पा जैसी अनेक औरतें आती है।

अर्थतंत्र के चकाचौंध में उलझे नई के बेबसी को, अपने गलत करतुतों को सही ठहराने की जद्दोजहद को नील और भोला के संवाद के माध्यम से लेखक ने बखूबी खोलने का प्रयास किया है। नील भोला से कहता है - " मैं तो दूसरों की प्यास बुझाता हूँ पर तुम नशीले जहर से देश की नई पीढ़ी को मारते हो। कानून के ढाँचे में न सिर्फ़ घुन बनकर उसे खोखला करते हो, बल्कि सरे बाजार उसे जूते-तले रौंदते भी हो।"[४] दोनों का विवेक जानता है वो गलत काम कर रहे हैं लेकिन ज्यादा का लालच उन्हें ये काम करने से नहीं रोकता और ना ही वो रूकना चाहते हैं। इसी वजह से जब नील को शिल्पा का पति कहता है अच्छे खासे पढ़े-लिखे हो कोई नौकरी क्यों नहीं करते तो नील तपाक से बोल पढ़ता है कि नौकरी करने से इतने पैसे नहीं मिलते। अतः कह सकते हैं बाजारवाद यह सोच हर किसी में पैदा करने में सफल हुआ है। तभी तो नील अपने आप को पेशेवर समाजसेवक, भावनात्मक सलाहकार, मैरिज काउन्सलर के रूप में प्रस्तुत कर अपने घिनौने काम को सामाजिक मान्यता देता नजर आता है।

Scanned by CamScanner

नील के संपर्क में आयी पारूल रिश्तों की मर्यादाओं की हर सीमा पार करती है। पति के होते हुए भी वो नील के बच्चे को जन्म देना चाहती है। "पारूल..." उसने नर्म स्वर में कहा, "क्लीनिक चलो।"
"मुझे यह बच्चा चाहिएं" आवाज स्थिर थी।
"कैसी बात कर रही हो ! ..... तुम किसी की पत्नी हो।"
"मैं भावनात्मक रूप से तुम्हारी पत्नी हूँ।"[५]

आज हर कोई अपने आप को बेच रहा है। लेकिन बेचने की होड में नैतिकता, स्वाभिमान, आत्मसम्मान जैसे चिजों को दरकिनार कर दिया जाता है, जो आगे चलकर समाज के साथ स्वयं उसके पतन का कारण भी बनता है। पारूल नील को पाने के लिए सबकुछ करती है और जब उसे लगता है कि अब ये मेरा नहीं हो सकता तो उसे मरवाने में भी आगे-पीछे नहीं देखती।

शैलेश मटियानी ने अपने उपन्यास "कबुतरखना" में अर्थतंत्र के प्रति बढ़ता मोह और उससे उपजे अनैतिक संबंधों पर खुलकर चर्चा की है। आज अर्थ के पिछे भागते हर इन्सान का रिश्ता बेमानी होता जा रहा है। "कबुतरखना" का सेठ करसम भाई अपनी पत्नी से संबंध रखने के बजाय शकुंतला बाई और अन्य स्त्रियों से संबंध बनाए रखता है। सेठ करसम भाई की पत्नी यशोदा बेन अपने पति के प्रेम से वंचित अपने हिस्से का प्रेम नौकर से प्राप्त करती है। ऐसे विलासिता परिवार के घर के नौकरों कर त्रासदी को चित्रित करते हुए उपन्यासकार कहता है " घर की नौकरी होती ऐसी। गरीबों के लड़कों के लिए हर जगह गड्ढे हैं, दोस्त। जुठे बर्तन भी घिसों दिन भर, रात को बीवियों को भी संभालों - बीमार पडके मर जाओ, तो कुत्ता भी सूँघने को नहीं भेजेगा कोई।" [६] इसी प्रवृत्ति से अपराध जन्म लेता है जिसे उपन्यास में चित्रित्र किया गया है।

नासिरा शर्मा ने अपने "जीरो रोड" उपन्यास में बेहतर अर्थ की तलाश में सिद्धार्थ के इलाहाइाद के छोटे मुहल्ले 'चक्र' से लेकर दुबई तक की यात्रा का यथार्थ चित्रण किया है। ये भूमंडलीकरण की ही देन है जिसने सारी सरहदों को तोड़ इन्सान को वैश्विक बनाया। लेकिन इस वैश्विक परिवेश ने इन्सान को इन्सान के रूप में प्रस्तुत न कर बाजार की वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि हमारी संस्कृति, मूल्यों आदि की जगह अर्थ ने ली है और इस अर्थ के चलते हम फिर से मानसिक गुलाम बनते जा रहे हैं।

कमोबेश सभी उपरर्युक्त उपन्यासों में अर्थ का मानसिक गुलाम बनते जा रहे इन्सानी जीवन में व्याप्त कुंठा, बेबसी, लाचारी, विवेकहिनता का यथार्थ चित्रण देखने मिलता है। भूमंडलीकरण के चपेट में आए रिश्तों की कसमसाहट एवं पारिवारिक त्रासदी का चित्रण देखने मिलती है और हमारे अंदर पनपते दया, क्षमा, करूणा जैसे मूल्य तिरोहित होते नजर आते हैं । अतः "भूमंडलीय दुष्प्रभावों को लेकर समस्त देशों का साहित्य चिंतित हैं। विशेषता तीसरी दुनिया के विकसनशील राष्ट्रों के साहित्य में अमीरी-गरीबी के बीच की बढ़ती खाई और मनुष्यता को छीजने की पीड़ा गहराई से अभिव्यक्त हुई है।" [७] शायद यही कारण है कि डॉ. पुष्पपाल सिंह भूमंडलीकरण को 'अपसंस्कृति' कहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ :

१. सुरेन्द्र वर्मा : दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता पृष्ठ क्र. १६३
२. सुरेन्द्र वर्मा : दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता पृष्ठ क्र. ११६
३. सुरेन्द्र वर्मा : दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता पृष्ठ क्र. १६३
४. सुरेन्द्र वर्मा : दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता पृष्ठ क्र. २३८-२३६
५. शैलेश मटियानी : कबुतरखना पृष्ठ क्र. १३१
६. डॉ. पुष्पपाल सिंहः भूमंडलीकरण और हिंदी उपन्यास पृष्ठ क्र. ७३

Scanned by CamScanner